[2024] 4 एस0सी0आर0 37: 2024 आईएनएससी 259

पुर्णी देवी तथा एक अन्य

बनाम

बाबूराम तथा एक अन्य

(सिविल अपील सं0 4633 वर्ष 2024)

02 अप्रैल 2024

(संजय करोल तथा अरविन्द कुमार, न्यायमूर्तिगण)

विचारणीय मुद्दा

एक वाद की डिक्री वादी के पक्ष में की गई थी। निष्पादन हेतु आवेदन 18-12-2000 को तहसीलदार (वंदोबस्त), हीरानगर के समक्ष दाखिल किया गया था। आवेदन 29-01-2005 को नामंजूर किया गया था। तहसीलदार ने संप्रेक्षित किया था कि वादी ने समुचित अधिकारिता वाले न्यायालय के समक्ष आवेदन नही किया था। क्या तहसीलदार के समक्ष निष्पादन याचिका का तत्परतापूर्वक पीछा करने वाली अवधि (18.12.2000 से 29-01-2005 तक) परिसीमा के अवधि की संगणना करने के प्रयोजन हेतु अपवर्जित किया जायेगा या नहीं।

शीर्ष टिप्पणियाँ

परिसीमा अधिनियम, 1963 - धारा 14 - जम्मू एवं कश्मीर परिसीमा अधिनियम - अनुच्छेद 182 - उच्च न्यायालय ने परिसीमा से वर्जित होने के नाते वादी द्वारा अधिमानित निष्पादन आवेदन को खारिज किया था- संधार्यता:

अभिनिर्धारित: वर्तमान मामले में, यह विवादित नही है कि:- (i) दोनों कार्यवाहियाँ प्रकृति में सिविल है तथा वादी का हित पूर्वाधिकारी द्वारा अग्रसर किया गया है; (ii) निष्पादन कार्यवाहियों की विफलता अधिकारिता के त्रुटि के कारण था; (iii) दोनों कार्यवाहियाँ डिक्री दिनांक 10-12-1986 के निष्पादन से संबंधित है, जो 09-11-2000 को अंतिमता प्राप्त करता है: (iv) दोनों कार्यवाहियाँ न्यायालय में है- दावा को सिद्ध करने के लिए अभिलेख पर कोई सारवान प्रकथन नही आया है कि वादी का हित पूर्वाधिकारी सद्भाव के अभाव में या इस ज्ञान से किसी दुर्भावनापूर्ण आशय से तहसीलदार के पास नही गया था कि डिक्री को निष्पादित करने के लिए यह सक्षम अधिकारिता प्राप्त न्यायालय नही है- अभिलेख के परिशीलन के पश्चात, यह स्पष्ट है कि वादी ने समुचित फोरम मानते हुए इसके समक्ष मामले का सद्भावपूर्वक तथा तत्परतापूर्वक एवं सद्भाव में पीछा किया है तथा इसलिए, इस प्रकार की समयावधि का अपवर्जन अवश्यंभावी है जब सक्षम अधिकारिता प्राप्त न्यायालय के समक्ष परिसीमा की संगणना की जाती है- परिसीमा अधिनियम की धारा 14 के अवलंब हेतु नियत सभी शर्तों को पूरा किया जाता है- इसलिए, 18-12-2000 से अवधि, जब निष्पादन आवेदन को 29-01-2005 को दाखिल किया गया था, जब पूर्व कार्यवाही को खारिज किया गया था, परिसीमा के अवधि की संगणना करते समय अपवर्जित किया जाना चाहिए- उच्च न्यायालय के आक्षेपित आदेश दिनंाक 09-04-2018 तथा मुंसिफ न्यायालय हीरानगर के आक्षेपित आदेश दिनांक 28-11-2007 (वादी के आवेदन को परिसीमा से वर्जित होने के नाते खारिज करने वाला) को अपास्त किया जाता है- वादी के निष्पादन आवेदन को नये सिरे

से विचार हेतु मुन्सिफ न्यायालय हीरानगर में दाखिल करने के लिए प्रत्यावर्तित किया जाता है। (पैरा 32, 37, 38, 39, 40)

उद्धृत निर्णय जन्य विधि

कन्सालिडिटेड इंजीनियरिंग इण्टर प्राइजेज बनाम प्रमुख सचिव सिंचाई विभाग **[2008] 5 एससीआर 1108: (2008) 7 एससीसी 169***; एम.पी. स्टील कार्पोरेशन बनाम सीसीई* **[2015] 7एससीआर 291: (2015) 7एससीसी 58- भरोसा किया गया।**

प्रेमलता अग्रवाल बनाम लक्ष्मण प्रसाद गुप्ता तथा अन्य **[1971] 1 एससीआर 364: (1970) 3 एससीसी 440;** *शेषनाथ सिंह बनाम वैधबती शिवराफुली कोआपरेटिव बैंक लि0* **[2021] 3 एससीआर 806: (2021) 7 एससीसी 313;** *लक्ष्मी श्रीनिवास आर एण्ड पी व्वायल्ड राइस मिल बनाम आन्ध्र प्रदेश् राज्य तथा एक अन्य* **2022 एससीसी आनलाइन एससी 1790- निर्दिष्ट**

जे एण्ड के बैंक लिमिटेड इत्यादि बनाम अमर पोल्ट्री फार्म **एआईआर 2007 जे एण्ड के 56 - निर्दिष्ट**

अधिनियमों की सूची

परिसीमा अधिनियम, 1963; जम्मू एवं कश्मीर परिसीमा अधिनियम; सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908

प्रमुख शब्दों की सूची

निष्पादन हेतु आवेदन: समुचित अधिकारिता; परिसीमा; परिसीमा अवधि की संगणना; सद्भावपूर्वक तथा तत्परतापूर्वक मामले का पीछा किया; अधिकारिता के बिना न्यायालय में सद्भाविक कार्यवाही के समय का अपवर्जन।

मामले की उत्पत्ति

सिविल अपीलीय अधिकारिता: सिविल अपील सं0 4633 वर्ष 2024 सीआरईवी सं0 33 वर्ष 2008 में जम्मू एवं कश्मीर तथा लद्दाख उच्च न्यायालय जम्मू के निर्णय तथा आदेश दिनंाक 09-04-2018 से

अधिवक्तागण

अपीलकर्तागण के लिए नितिन सांगरा, रिजू घोष, श्रीमती प्रज्ञा वघेल, अधिवक्तागण

प्रत्यर्थीगण के लिए सुनील फर्नांडीज, वरिष्ठ अधिवक्ता, सुश्री नुपुर कुमार, सुश्री दीक्षा दादू, अधिवक्तागण

सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय/आदेश

<u>निर्णय</u>

संजय करोल, न्यायमूर्ति

अनुमति प्रदान की गई.

2. वर्तमान अपील जम्मू एवं कश्मीर उच्च न्यायालय जम्मू के सिविल पुनरीक्षण सं0 33/2008 के अंतिम निर्णय तथा आदेश दिनांक 09-04-2018 से उद्भूत होता है, जिसके

द्वारा फाइल सं0 70/निष्पादन में मुन्सिफ, हीरानगर के निर्णय तथा आदेश दिनांक 28-11-2007 की पुष्टि की गई थी, जिसमें इसमें वादी द्वारा अधिमानित निष्पादन आवेदन को परिसीमा से वर्जित होने के नाते खारिज किया गया था।

<u>तथ्यात्मक इतिहास</u>

3. वर्तमान मामले की उत्पत्ति पूर्व तिथि 01-06-1984 की है, जिसमें अपीलकर्ता (एतस्मिन् पश्चात ''वादी'') के हित पूर्वाधिकरियों ने इसमें प्रत्यर्थीगण (एतस्मिन् पश्चात ''प्रतिवादीगण'') के विरुद्ध कब्जा हेतु वाद दाखिल किया था। 10-12-1986 को, इस वाद की डिक्री विद्वान मुन्सिफ, प्रथम श्रेणी हीरानगर द्वारा वादी के पक्ष में की गई थी तथा प्रतिवादीगण को सम्पति का खाली तथा शांतिपूर्ण कब्जा वादी को देने का निदेश दिया गया था। प्रथम अपील में, इस डिक्री को चुनौती प्रत्यर्थीगण द्वारा विद्वान जिला जज, कठुवा के समक्ष दिया गया था, जिसे 09-02-1990 को खारिज किया गया था। तत्पश्चात प्रत्यर्थीगण ने जम्मू एवं कश्मीर उच्च न्यायालय के समक्ष द्वितीय अपील अधिमानित किया था जिसे आदेश दिनंाक 09-11-2000 द्वारा खारिज किया गया था। आगे अपील अधिमानित नहीं किया गया था। इसलिए विद्वान मुन्सिफ न्यायालय के डिक्री 09-11-2000 को अंतिमता प्राप्त किया था।

4. वर्तमान वाद 18-12-2000 को विद्वान तहसीलदार (बंदोबस्त), हीरानगर के समक्ष वादी के हित पूर्वाधिकारी द्वारा दाखिल निष्पादन हेतु आवेदन से उद्भूत होता है। इस आवेदन को 29-01-2005 को नामंजूर किया गया था, जिसके द्वारा विद्वान तहसीलदार ने संप्रेक्षित किया था कि वादी ने समुचित अधिकारिता वाले न्यायालय के समक्ष आवेदन नहीं किया था।

5. तत्पश्चात वादी ने 03-10-2005 को मुन्सिफ न्यायालय हीरानगर के समक्ष निष्पादन हेतु नये सिरे से आवेदन अधिमानित किया था। इस आवेदन के परिणामस्वरूप आदेश दिनांक 28-11-2007 किया गया था, जिसके द्वारा, विद्वान मुन्सिफ न्यायालय ने आवेदन परिसीमा से वर्जित होने के नाते खारिज किया था, जिसकी पुष्टि आक्षेपित आदेश द्वारा की गई है।

<u>अवर न्यायालयों की तार्किकता</u>

मुन्सिफ न्यायालय, आदेश दिनांक 28-11-2007

6. अवधारण हेतु विरचित प्रश्न यह है कि क्या निष्पादन याचिका को समय के अन्दर दाखिल किया गया था तथा क्या निष्पादन याचिका दाखिल करने हेतु परिसीमा अवधि 3 वर्ष या 12 वर्ष है।

7. न्यायालय ने जम्मू एवं कश्मीर परिसीमा अधिनियम का अनुच्छेद 182 (जो 3 वर्ष का उपबंध करता है) तथा सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 48 (जो 12 वर्ष का उपबंध करता है, एतस्मिन् पश्चात (सि0प्र0सं0) के सावधानीपूर्वक परिशीलन के पश्चात संप्रेक्षित किया था कि अनुच्छेद 182 डिक्री के प्रवर्तन के पहली बार मांग करने हेतु निष्पादन आवेदन दाखिल करने के लिए परिसीमा अवधि से संबंधित है। जबकि सि0प्र0सं0 की धारा 48

पश्चात्वर्ती आवेदनों से संबंधित है तथा बाह्य सीमा नियत करता है जब निष्पादन अतुष्ट रहता है।

8. आवेदन को 3 वर्ष के अन्दर दाखिल किये जाने के लिए आवश्यक अभिनिर्धारित किया गया था जैसा जम्मू एवं कश्मीर परिसीमा अधिनियम के अनुच्छेद 182 द्वारा आपेक्षित है, जो तब से लागू होगा जब द्वितीय अपील को खारिज किया गया था। तद्नुसार, मुन्सिफ न्यायालय, हीरानगर, ने आवेदन को काल वर्जित अभिनिर्धारित किया तथा इसलिए खारिज किया था।

9. इस प्रक्रम पर परिसीमा अधिनियम की धारा 14 के अन्तर्गत समयावधि के अपवर्जन के बारे में कोई तर्क या चर्चा नहीं था।

10. वादी ने पूर्वोक्त आदेश के विरुद्ध सिविल पुनरीक्षण सं0 33/2008 अधिमानित किया था जिसे आक्षेपित आदेश दिनांक 09-04-2018 द्वारा खारिज किया गया था।

आक्षेपित आदेश

11. आक्षेपित आदेश द्वारा यह प्रश्न भी विरचित किया गया था कि क्या डिक्री के निष्पादन हेतु, आवेदन 12 वर्षों के अन्दर जैसा सि0प्र0सं0 की धारा 48 द्वारा विहित है का 3 वर्षों के अन्दर जैसा जम्मू एवं कश्मीर परिसीमा अधिनियम के अनुच्छेद 182 द्वारा विहित है दाखिल किया जाना चाहिए।

12. एआईआर 2007 जम्मू एवं कश्मीर 56 में उच्च न्यायालय द्वारा दिये गये निर्णय पर भरोसा रखा गया है जिसमें यह संप्रेक्षित किया गया था कि प्रथम निष्पादन आवेदन हेतु परिसीमा का विनियमन जम्मू एवं कश्मीर परिसीमा अधिनियम के अनुच्छेद 182 द्वारा किया जायेगा। आगे प्रेमलता अग्रवाल बनाम लक्ष्मण प्रसाद गुप्ता तथा अन्य (1971) 1 एससीआर 364: (1970) 3 एससीसी 440 (2 जजो की पीठ) में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा रखा गया है जिसमें सि0प्र0सं0 की धारा 48 पर विचार किया गया था। इस न्यायालय ने संप्रेक्षित किया था कि धारा 48 निष्पादन हेतु उपबंधित अधिकतम् समय सीमा का उपबंध करता है, लेकिन यह उस अवधि को विहित नही करता है जिसमें निष्पादन हेतु प्रत्येक आवेदन किया जाना है।

13. वादी का तर्क कि तहसीलदार के समक्ष कार्यवाहियों का पीछा करने में व्यतीत समय को अपवर्जित किया जाना आवश्यक है, उच्च न्यायालय द्वारा अभिलिखित तथा नामंजूर किया गया है।

14. आक्षेपित आदेश द्वारा अंत में अभिनिर्धारित किया गया था कि निष्पादन याचिका का खारिज किया जाना तर्क संगत है तथा इसलिए हस्तक्षेप नही किया जा सकता है। फिर भी, पुनरीक्षण को निपटाते समय, न्यायालय ने संप्रेक्षित किया कि राज्य सिविल प्रक्रिया संहिता को 12 वर्ष तक लाया जाना आवश्यक है।

<u>अपीलकत्र्री/वादी की ओर से निवेदन</u>

15. वादी क विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि विद्वान उच्च न्यायालय का तर्क कि वादी ने गलत फोरम चुना था तथा समय के अपवर्जन का हकदार नही है जो इस

न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि के प्रतिकूल है कि परिसीमा अधिनियम 1963 की धारा 14 का प्रावधान अनुतोष दिये जाने हेतु अभिप्रेत है, जहाँ व्यक्ति ने कुछ त्रुटि किया है तथा इस प्रकार के प्रावधानों को व्यापक तरीके से लागू किया जाना चाहिए। इसके अलावा, परिसीमा अधिनियम की धारा 14 का प्रावधान परिसीमा अधिनियम की धारा 14 के प्रावधान के समविषयक सामग्री है, जैसा तत्कालीन जम्मू एवं कश्मीर के संबंध में लागू होता है।

16. वादी ने कंसोलिडिटेड इंजीनियरिंग इण्टर प्राइजेज बनाम प्रमुख सचिव, सचिव विभाग (2008) 5 एससीआर 1108: (2008) 7 एससीसी 169 (3 जजों की पीठ) तथा एम.पी. स्टील कार्पोरेशन बनाम सीसीई (2015) 7 एससीआर 291: (2015) 7एससीसी 58 (2 जजो की पीठ) में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा रखा जाना ईप्सित है जिसमें यह प्रतिपादित किया गया था कि परिसीमा अधिनियम की धारा 14 का प्रावधान न्याय के उद्देश्य को आगे बढ़ाने के लिए है तथा कार्यवाहियों को व्यर्थ करने के बजाय ऐसा करने का निवर्चन करना चाहिए।

17. यह आगे निवेदन किया गया है कि वर्तमान मामले के तथ्यों के आलोक में, वादी परिसीमा अधिनियम की धारा 14(2) के दृष्टिगत विद्वान तहसीलदार के समक्ष अपने उपचार का पीछा करने में व्यतीत समय के अपवर्जन का हकदार है। निर्णय तथा डिक्री दिनंाक 09-10-1986 के क्रियान्वयन हेतु तहसीलदार के समक्ष वादी के पूर्वाधिकारी द्वारा आवेदन का दाखिल किया जाना वास्तविक सद्भावपूर्ण विश्वास तथा सद्भाव में था कि तहसीलदार सिविल न्यायालय द्वारा पारित डिक्रियों का निष्पादन करने के लिए अधिकारिता रखता है।

18. इस सिहांवलोकन के बदले में, यह निवेदन किया गया है कि वादी द्वारा गलत उपचार के पूर्व या गलत फोरम के चयन को सद्भाव, सम्यक् तत्परता से रहित या सद्भाव का अभाव नहीं कहा जा सकता है।

19. आगे, यह विवादित नही है कि भू-राजस्व अधिनियम की धारा 105 तथा 112 के दृष्टिगत, विद्वान तहसीलदार वंदोबस्त न्यायालय के पास न्यायालय का सभी साजो सामान है तथा इस प्रकार परिसीमा अधिनियम की धारा 14 के प्रयोजन हेतु अभिव्यक्ति ''न्यायालय'' के व्याप्ति तथा सीमा में आयेगा।

प्रत्यर्थी की ओर से निवेदन

21. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने वादी द्वारा लिये गये आधार का जोरदार तरीके से विरोध किया है। यह निवेदन किया गया है कि वादी पहली बार इस न्यायालय के समक्ष इस अभिवाक् को ले रही है तथा अवर न्यायालयों के समक्ष परिसीमा अधिनियम की धारा 14 का अभिवाक् नही उठाया था।

22. वादी की ओर से या जानबूझकर अवज्ञा का विमर्शित कार्य था तथा परिसीमा अधिनियम की धारा 14 का अभिवाक् बिल्कुल पहली बार उठाया जाना चाहिए था।

23. आगे यह निवेदन किया गया है कि इसमें वादी निर्दोषिता के साथ न्यायालय में नही आई है। इन लोगों ने इस तथ्य को छिपाया है कि ये लोग द्वितीय अपील में उपस्थित नही हुए थे तथा तत्पश्चात, एक पक्षीय आदेश को अपास्त करने के लिए आवेदन दाखिल किया था, जिसे अनुज्ञात किया गया था तथा केवल इसके बाद, द्वितीय अपील आक्षेपित आदेश द्वारा खारिज किया गया था। इस न्यायालय ने एम.पी. स्टील (ऊपर) में दोहराया है कि 'सम्यक् तत्परता' तथा सद्भाव अभिप्रेत है कि पक्षकार जो धारा 14 का अवलंब लेता है उपेक्षा, त्रुटि या उदासीनता का दोषी नही होता है।

<u>इस न्यायालय के समक्ष विवाद्यक</u>

24. उठाये गये निवेदनों के दृष्टिगत, विवाद्यक जो इस न्यायालय के विचारार्थ पैदा होता है यह है कि क्या तहसीलदार के समक्ष निष्पादन याचिका का तत्परतापूर्वक पीछा करते हुए अवधि (18.12.2000 से 29.01.2005) को परिसीमा अवधि की संगणना करने के प्रयोजन हेतु अपवर्जित किया जायेगा या नहीं।

<u>विश्लेषण तथा विचारणा</u>

25. त्वरित संदर्भ हेतु परिसीमा अधिनियम की धारा 14 के सुसंगत भाग को निम्नवत् उद्धृत किया जाता है:

> ''धारा 14. बिना अधिकारिता वाले न्यायालय में सद्भावपूर्वक की गयी कार्यवाही में लगे समय का अपवर्जन ....
>
> **(2) किसी आवेदन के परिसीमा काल की संगणना में उतना समय, जितने के दौरान वादी चाहे प्रथम बार के अपील चाहे पुनरीक्षण न्यायालय में उसी पक्षकार के विरुद्ध उसी अनुतोष के लिए अन्य सिविल कार्यवाही सम्यक् तत्परता से करता रहा है, अपवर्जित कर दिया जायेगा जहाँ कि कार्यवाही सद्भावपूर्वक किसी ऐसे न्यायालय में अभियोजित की गयी हो जो अधिकारिता की त्रुटि या वैसी ही प्रकृति के अन्य हेतुक से उसे ग्रहण करने में असमर्थ हो।**
>
> **.....**

26. वादीगण ने निवेदन किया है कि परिसीमा अधिनियम की धारा 14 का प्रावधान, तत्कालीन जम्मू एवं कश्मीर राज्य में लागू परिसीमा अधिनियम में उल्लिखित है, जिसका विरोध प्रत्यर्थीगण द्वारा नहीं किया गया है।

27. परिसीमा अधिनियम की धारा 14(2) के परिशीलन के बाद, जो जम्मू एवं कश्मीर राज्य पर भी लागू होता है, यह स्पष्ट है कि यह परिसीमा के अवधि को अपवर्जित करते हुए आक्षेप को उत्कीर्ण करता है जब कार्यवाहियों का पीछा न्यायालय में सम्यक् तत्परता तथा सद्भाव में किया जा रहा है'' जो अधिकारिता के त्रुटि या इसी प्रकृति के अन्य कारण से इस ग्रहण करने में असमर्थ होता है।''

28. प्रतिवादीगण द्वारा उठाया गया पहला आक्षेप यह है कि परिसीमा के अपवर्जन का अभिवाक् अवर न्यायालयों के समक्ष नही उठाया गया है तथा इस न्यायालय के समक्ष पहली बार उठाया नही जा सकता है।

29. हम इस निवेदन में कोई गुणावगुण नही पाते हैं, विद्वान उच्च न्यायालय ने पैरा 9 में विद्वान तहसीलदार के समक्ष कार्यवाहियों का पीछा करने में व्यतीत समय के अपवर्जन से संबंधित वादी के निवेदन को स्पष्ट रूप से अभिलिखित किया है। इसलिए, यह नही कहा जा सकता है कि अपवर्जन का अभिवाक् इस न्यायालय के समक्ष पहली बार उठाया गया है।

30. धारा 14 के प्रयोज्यता से संबंधित सिद्धांतों पर ***कंसालिडेटेड इंजीनियरिंग इण्टरप्राइजेज*** (ऊपर) में इस न्यायालय द्वारा विस्तापूर्वक चर्चा किया गया था तथा सार संक्षेपित किया गया था, जिसमें याचिका के संबंध में परिसीम अधिनियम की धारा 14 के अन्तर्गत समयावधि के अपवर्जन को माध्यस्थम अधिनियम की धारा 34 के अन्तर्गत धारित करते हुए यह संप्रेक्षित किया गया थाः-

> ''21. परिसीमा अधिनियम की धारा 14 अधिकारिता के बिना न्यायालय में सद्भाविक कार्यवाही के अपवर्जन से संबंधित है। उच्च धारा के विश्लेषण के पश्चात, यह स्पष्ट हो जाता है कि धारा 14 को लागू करने के पहले निम्न शर्तों को पूरा किया चाहिए:
>
> (1) पूर्व तथा पश्चातवर्ती दोनों कार्यवाहियाँ एक ही पक्षकार द्वारा अभियोजित सिविल कार्यवाहियाँ है:
>
> (2) पूर्व कार्यवाही को सम्यक् तत्परता के साथ तथा सद्भाव में अभियोजित किया गया था;
>
> (3) पूर्व कार्यवाही की विफलता अधिकारिता के त्रुटि या इसी प्रकृति के अन्य कारण के कारण था।
>
> (4) पूर्ववर्ती कार्यवाही तथा पश्चात्वर्ती कार्यवाही का विवाद्य एक ही मामले से संबंधित होना चाहिए; तथा
>
> (5) दोनों कार्यवाहियाँ न्यायालय में है।''

31. इस न्यायालय ने ***कंसालिडेटेड इंजीनियरिंग इण्टरप्राइजेज*** (ऊपर) में आगे प्रतिपादित किया था कि इस धारा के प्रावधानों का निवर्चन तथा प्रयोग उस तरीके से किया जाना चाहिए जो वर्तमान कार्यवाहियों को व्यर्थ करने के बजाय न्याय के उद्देश्य को प्रोत्साहित करता है तथा गलत न्यायालय में उपचार का तत्परता के साथ पीछा करते हुए लगे समय को अपवर्जित किया जाना चाहिए।

32. वर्तमान मामले में, यह विवादित नही है कि:-

(i) दोनों कार्यवाहियाँ प्रकृति में सिविल है तथा वादी या हित पूर्वाधिकारी द्वारा अभियोजित किया गया है।

(ii) निष्पादन कार्यवाहियाँ डिक्री दिनांक 10.12.1986 के निष्पादन से संबंधित है, जो 09-11-2000 को अंतिमता प्राप्त करता है।

(iii) दोनों कार्यवाहियाँ डिक्री दिनांक 10.12.1986 के निष्पादन से सम्बन्धित हैं, जो 09.11.2000 को अंतिमतता प्राप्त करता है।

(iv) दोनों कार्यवाहियाँ न्यायालय में है।

33. धारा 14 के अवलंब हेतु संघटकों के संबंध में प्रत्यर्थी द्वारा बताया गया एक मात्र आक्षेप यह है कि वादी निर्दोषिता के साथ इस न्यायालय में नही आई है तथा तत्परतापूर्वक एवं सद्भाव में तहसीलदार के न्यायालय नही आई थी।

34. ***एम.पी. स्टील*** (ऊपर) में इस न्यायालय के निर्णय में परिसीमा अधिनियम की धारा 14 का अवलंब लेने के प्रयोजन हेतु वाक्यांश ''सम्यक् तत्परता'' तथा ''सद्भाव में'' पर चर्चा की गई थी। सीमा शुल्क अधिनियम की धारा 14 के प्रयोग पर विचार करते हुए, यह संप्रेक्षित किया गया था:

> ''10. हम यह भी बता सकते हैं कि कंसालिडेटेड इंजीनियरिंग मामला ((2008) 7एससीसी 169) में उल्लिखित शर्त सं0 1 से 4 को वास्तव में पूरा किया गया है। यह स्पष्ट है कि पूर्व तथा पश्चातवर्ती दोनों कार्यवाहियाँ एक ही पक्षकार द्वारा अभियोजित सिविल कार्यवाहियाँ है। पूर्व कार्यवाही को सम्यक् तत्परता तथा सद्भाव में अभियोजित किया गया था, जैसा स्वयं कंसालिडेटेड इंजीनियरिंग ((2008) 7एससीसी 169) में स्पष्ट किया गया है। **ये वाक्यांश एक मात्र अभिप्रेत है कि पक्षकार जो धारा 14 का अवलंब लेता है को उपेक्षा, त्रुटि का उदासीनता का दोषी नही होना चाहिए। आगे, कार्यवाहियों को अटकाने या विरोधी पक्षकार को तंग करने के विचार से किया गया साशय तथा कथित त्रुटि नही होना चाहिए।**
>
> xxx xxx xxx
>
> **49. .... अभिव्यक्ति ''समय जिसके दौरान वादी को एक दूसरे सिविल कार्यवाही में सम्यक् तत्परता के साथ अभियोजित किया जा रहा है'' का अर्थ उस तरीके से लगाया जाना आवश्यक है जो प्राप्त किये जाने के लिए ईप्सित उद्देश्य को आगे बढ़ाता है, तद्द्वारा न्याय का उद्देश्य आगे बढ़ता है।''**
>
> **(बल दिया गया)**

35. ***कंसालिडेटेड इंजीनियरिंग इण्टरप्राइजेज*** (ऊपर) तथा एम.पी. स्टील (ऊपर) में निर्णयों का अनुसरण लगातार इस न्यायालय द्वारा किया गया है। उदाहरण के लिए ***शेष नाथ सिंह बनाम वैधवती शिवराफुली कोआपरेटिव बैंक लि0*** (2021) 3एससीआर 806: (2021) 7एससीसी 313 (2 जजो की पीठ) में, धारा 14 को शोधन अक्षमता तथा दिवाला संहिता, 2016 की धारा 7 तथा सरफेसी एक्ट के अन्तर्गत आवेदनों के संबंध में लागू होना धारित करते हुए, यह संप्रेक्षित किया गया थाः-

> ''75. परिसीमा अधिनियम की धारा 14 को सम्पूर्ण पढ़ा जाना चाहिए। धारा 14 की उपधारा (1), (2) तथा (3) को एक साथ तथा सावधानीपूर्वक पढ़ने से यह स्पष्ट होता है कि आवेदक जिसने उस फोरम के समक्ष सम्यक् तत्परता के साथ एक दूसरे सिविल कार्यवाही को अभियोजित किया है जो अधिकारिता के त्रुटि या इसी प्रकृति के किसी अन्य उद्देश्य के कारण इसे ग्रहण करने में असक्षम है, उस

समय के अपवर्जन का हकदार है जिसके दौरान आवेदक परिसीमा के अवधि की संगणना करने में इस प्रकार की कार्यवाही को अभियोजित कर रहा था। धारा 14 की उपधारा (1), (2) तथा (3) का मुख्य प्रावधान यह नही कहता है कि धारा 14 का अवलंब केवल सद्भाव में अभियोजित पूर्ववर्ती कार्यवाहियों के समाप्ति पर किया जा सकता है।''

36. बिल्कुल हाल में, ***लक्ष्मी श्रीनिवास आर तथा पी ब्वाइल्ड राइस मिल बनाम आंध्र प्रदेश राज्य तथा एक अन्य 2022 एससीसी आनलाइन एससी 1790*** (2 जजो की पीठ) में इस न्यायालय ने धारा 14 के दृष्टिगत वादी के सद्भाव को चुनौती के अभाव में, रिट अधिकारिता के अन्तर्गत उपचार का पीछा करने में इसमें वादी द्वारा अपने ऊपर लिये गये समयावधि को अवर्जित करने के संबंध में ***कंसालिडेटेड इंजीनियरिंग इण्टरप्राइजेज (ऊपर)*** तथा ***एम.पी. स्टील (ऊपर***) में आदेश का अनुसरण किया था।

37. इस दावा को सिद्ध करने के लिए अभिलेख पर कोई सारवान प्रकथन नही आया है कि वादी का हित पूर्वाधिकारी तहसीलदार के पास सद्भाव के अभाव में या इस ज्ञान के साथ किसी दुर्भावनापूर्ण आशय से आयी थी कि यह डिक्री को निष्पादित करने के लिए सक्षम अधिकारिता रखने वाला न्यायालय नही है। न्याय के उद्देश्य को आगे बढ़ाने के लक्ष्य को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

38. हम समय के अपवर्जन हेतु अभिवाक् को नामंजूर करते समय पैरा 9 में विद्वान उच्च न्यायालय द्वारा दिये गये तर्क को धारणीय होना नही पाते है। अभिलेख के परिशीलन के पश्चात्, यह स्पष्ट है कि वादी ने इसे समुचित कोरम होना विश्वास करने के पहले सद्भावपूर्वक तथा तत्परतापूर्वक एवं सद्भाव में मामले का पीछा किया है तथा इसलिए, इस प्रकार समयावधि को अपवर्जित किया जाना आवश्यक है जब सक्षम अधिकारिता प्राप्त न्यायालय के समक्ष परिसीमा की संगणना की जा रही हो। परिसीमा अधिनियम की धारा 14 के अवलंब हेतु नियत सभी शर्तों को पूरा किया जाता है।

39. इसलिए, उपरोक्त चर्चा के दृष्टिगत 18.12.2000 से 29.01.2005 तक की अवधि जब निष्पादन आवेदन दाखिल किया गया था, जब पूर्व कार्यवाही को खारिज किया गया था, परिसीमा के अवधि की संगणना करते समय अपवर्जित किया जाना चाहिए, जिसके परिणास्वरूप परिसीमा अधिनियम के अनुच्छेद 182 के अन्तर्गत विहित परिसीमा अवधि में होने के नाते वादी द्वारा निष्पादन आवेदन दाखिल किया गया था, जो 3 वर्ष है।

40. परिणामस्वरूप, अपील को अनुज्ञात किया जाता है। उच्च न्यायालय के आक्षेपित आदेश दिनांक 09-04-2018 तथा मुन्सिफ न्यायालय, हीरानगर के आक्षेपित आदेश दिनांक 28-11-2007 को अपास्त किया जाता है। वादी के निष्पादन आवेदन को परिसीमा जिसे ऊपर विनिश्चत किया गया है पर विचार के अनुरूप नये सिरे से विचार हेतु मुन्सिफ न्यायालय, हीरानगर में दाखिल करने के लिए प्रत्यावर्जित किया जाता है।

41. लंबित आवेदन, यह कोई है, को निपटाया जाता है। खर्चा के संबंध में कोई आदेश नही।

अंकित ज्ञान द्वारा शीर्ष टिप्पणियाँ तैयार की गई।

मामले का परिणाम:
अपील अनुज्ञात

(यह अनुवाद शिवा कान्त तिवारी पैनल अनुवादक के द्वारा किया गया)